नियमसार, अर्थात् मोक्ष का मार्ग। मोक्ष अर्थात् पूर्ण आनन्द की प्राप्ति का मार्ग। मोक्ष अर्थात् पूर्ण आनन्द, उसकी प्राप्ति का मार्ग, उसे नियमसार कहते हैं। अपने यहाँ तक आया है। **'नियमसार' ('नियम का सार') ऐसा कहकर शुद्धरत्नत्रय का स्वरूप कहा है।** यहाँ तक आया है। यह क्या कहा? भगवान कुन्दकुन्दाचार्य नियमसार कहते हैं। अर्थात् क्या? कि शुद्धरत्नत्रय का स्वरूप, उसे नियमसार कहा जाता है।

शुद्धरत्नत्रय अर्थात् क्या? यह ऊपर आ गया है। आत्मा शुद्ध चैतन्यस्वरूप -आनन्दस्वरूप है, उसकी अन्तर में स्वसन्मुख शुद्धता के सन्मुख एकाग्रता होने का नाम सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र है। समझ में आया? शुद्धरत्नत्रय। शुद्ध ऐसा जो आत्मा सच्चिदानन्द प्रभु सिद्धसमान पवित्र धाम ऐसे शुद्ध की श्रद्धा, शुद्ध का ज्ञान और शुद्ध की रमणता को यहाँ सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र कहते हैं। शुद्ध कहने से अशुद्धता का निषेध किया है। व्यवहाररत्नत्रय जो कहा जाता है, देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा, शास्त्र का ज्ञान और व्यवहार

पंचमहाव्रत के विकल्प, चारित्र व्यवहार, वह मार्ग नहीं है, वह तो राग है बीच में। आत्मा वीतराग परम आनन्दस्वरूप है, उसकी स्वसन्मुख की श्रद्धा, ज्ञान और रमणता, उसे ही मोक्ष का मार्ग तीर्थंकर परमेश्वर के मुख में वह आया है। समझ में आया?

कैसा है वह ? शुद्धरत्नत्रय का स्वरूप कहा वह। किसने कहा? **केवलियों तथा श्रुतकेवलियों ने कहा हुआ है।** देखो! है? ऐसे तो दूसरे भी ऐसा कहते हैं कि भगवान ने कहा है, ऐसा कहता हूँ। यह तो सर्वज्ञ परमेश्वर केवलज्ञान पूर्ण जिन्हें प्रगट हुआ। शक्ति और स्वभाव तो आत्मा का केवलज्ञान ही है। वह अन्तर-सन्मुख ध्यान द्वारा शुक्लध्यान द्वारा जिन्हें वह केवलज्ञान एक समय में तीन काल, तीन लोक को जानने की अपनी शक्ति थी, उसे प्रगट की। ऐसे केवलियों ने यह नियमसार कहा है। समझ में आया?

उसमें ऐसा आता है, नहीं? '**सुदकेवलीभणिदं**' यहाँ '**केवलिश्रुतकेवलिभणितम्**' स्पष्ट कर दिया है। समयसार में '**सुदकेवलीभणिदं**' (कहा)। श्रुत और केवली दो भिन्न करके टीका में अर्थ किया। टीकाकार ऐसा कहते हैं, नहीं तो '**सुदकेवलीभणिदं**' ऐसा है। समयसार। नियमसार में तो '**केवलिश्रुतकेवलिभणितम्**' (कह दिया।) केवली के दो विशेषण-एक केवली और एक श्रुतकेवली। दोनों ने यह कहा हुआ है। आहा..! समझ में आया?

भगवान के समवसरण में प्रभु विराजते थे। कुन्दकुन्दाचार्य वहाँ गये थे। कहते हैं कि केवली श्रुतकेवलियों ने कहा, वह मैं कहता हूँ। वह शुद्धरत्नत्रय केवलियों ने और श्रुतकेवलियों ने कहा हुआ है। यह तो शब्दार्थ हुआ।

अब '**केवली', वे सकल प्रत्यक्षज्ञान के धारण करनेवाले...** केवलज्ञान, वह सकल प्रत्यक्ष है। तीन काल, तीन लोक सब जिन्हें ज्ञान की दशा में प्रत्यक्ष हो गये हैं। ऐसे **सकल प्रत्यक्षज्ञान के धारण करनेवाले और 'श्रुतकेवली', वे सकल द्रव्यश्रुत के धारण करनेवाले;...** देखो! यहाँ चौथे-पाँचवें के निश्चय श्रुतकेवली नहीं लिये। मगनभाई! द्रव्यश्रुत जो पूर्ण द्रव्यश्रुत है, बारह अंग, उसके धारक श्रुतकेवली। श्रुतज्ञान में पूरे, भगवान के समवसरण में विराजते थे उन्होंने कहा हुआ, भगवान ने कहा हुआ, यह दोनों ने कहा हुआ है। समझ में आया? सकल द्रव्यश्रुत के धारक, जितने शास्त्र सब बारह अंग कहलाते हैं, वह सब जिन्हें अन्तर (में) था उन्होंने यह नियमसार कहा हुआ है।

ऐसे केवलियों तथा श्रुतकेवलियों ने कहा हुआ, सकल भव्यसमूह को हितकर,... अब यह कैसा है नियमसार? भव्य योग्य प्राणी को हितकर है। जिसे आत्मा का मोक्ष करना है और योग्यता है, ऐसे जीव को यह नियमसार हितकर है। आहा..! समझ में आया? '**नियमसार' नाम का परमागम मैं कहता हूँ।** 'नियमसार' नाम का परमागम मैं कहता हूँ। ऐसा कहा। आगम तो कहते हैं परन्तु यह तो परमागम। मैं कहता हूँ, पद्मप्रभमलधारिदेव इसका अर्थ करते हैं। स्वयं कहते हैं न, मैं नियमसार कहता हूँ। '**केवलिश्रुतकेवलिभणितम्**'। वह कहूँगा। '**वक्ष्यामि**'।

कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं कि मैं कहूँगा। कहनेवाला तो मैं हूँ। उसकी टीका करनेवाले पद्मप्रभमलधारिदेव मुनि हैं। दोनों दिगम्बर मुनि-सन्त वनवासी (थे)। सन्तों की जैनधर्म की पद्धति ही अनादि नग्न और वनवासी थे। पश्चात् यह दुष्काल पड़ा, उसमें से यह सब अर्धफालक (हुए)। सफेद टुकड़ा (वस्त्र) लेकर साधु होकर निकले, फिर उसमें से ये श्वेताम्बर पन्थ निकला। वीतराग के मार्ग से-परम्परा से विरुद्ध होकर निकला। उसके बाद पन्द्रह सौ, अभी से पाँच सौ वर्ष पहले यह स्थानकवासी निकले। ये मूर्ति को उत्थापित कर निकले। बाकी दूसरी मान्यता रखी। फिर यह और तेरापंथी निकले। अणुव्रत आन्दोलन करनेवाले। ये तो अभी (निकले)। यह सब एक के बाद एक सर्वज्ञ वीतराग पन्थ में से विपरीत रूप से निकले हैं। ऐसा है। आहा..हा..! बहुत कठिन काम। स्वरूपचन्दभाई! ऐसा है यह।

इस प्रकार विशिष्ट इष्टदेवता का स्तवन करके,... खास अपने प्रिय वीर भगवान, अभी जिनका वीरशासन चलता है, ऐसे इष्टदेवता के स्तवन के बाद। इसमें उनकी स्तुति की। इसमें कहा न? नमकर। **सूत्रकार पूर्वाचार्य श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेवगुरु ने प्रतिज्ञा की।** टीकाकार, कुन्दकुन्दाचार्य को (के लिये) ऐसा कहते हैं कि पूर्वाचार्यश्री कुन्दकुन्दाचार्यदेवगुरु ने प्रतिज्ञा की, ऐसा कहा। देव और गुरु। टीकाकार पद्मप्रभमलधारिदेव पंच महाव्रतधारी भावलिंगी मुनि हैं। वनवासी-जंगल में रहनेवाले, वे कहते हैं कि पूर्वाचार्य ऐसे कुन्दकुन्दाचार्यदेवगुरु, देव-गुरु। उन्होंने प्रतिज्ञा की। कुन्दकुन्दाचार्य के प्रति कितना (बहुमान है)! पंच महाव्रतधारी मुनि भावलिंगी दिगम्बर सन्त हैं, वे भी

कुन्दकुन्दाचार्य को 'कुन्दकुन्दाचार्यदेवगुरु' ऐसा कहते हैं। उन्होंने यह प्रतिज्ञा की है। समझ में आया? आहा..हा..!

इस प्रकार सर्व पदों का तात्पर्य कहा गया। लो! एक-एक शब्द का अर्थ पृथक् करके कहा गया है।

श्लोक-८

अब, पहली गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज श्री पद्मप्रभमलधारिदेव श्लोक कहते हैं :-

(मालिनी)

जयति जगति वीरः शुद्धभावास्तमारः,
त्रिभुवनजनपूज्यः पूर्णबोधैकराज्यः।
नतदिविजसमाजः प्रास्तजन्मद्रुबीजः,
समवसृतिनिवासः केवलश्रीनिवासः ।।८।।

(वीरछन्द)

शुद्धभाव के द्वारा जिनने काम शत्रु का किया विनाश।
त्रिभुवन जन द्वारा जो पूजित, पूर्ण ज्ञान है जिनका राज्य॥
सुरगण जिनको करें नमन जो जन्मवृक्ष का बीज नशें।
केवल-श्रीपति समवसरण के वासी प्रभु जयवन्त रहें॥८॥

श्लोकार्थ :— शुद्धभाव द्वारा मार* का (काम का) जिन्होंने नाश किया है, तीन भुवन के जनों को जो पूज्य हैं, पूर्ण ज्ञान जिनका एक राज्य है, देवों का समाज जिन्हें नमन करता है, जन्मवृक्ष का बीज जिन्होंने नष्ट किया है, समवसरण में जिनका निवास है और केवलश्री (केवलज्ञानदर्शनरूपी लक्ष्मी) जिनमें वास करती है, वे वीर जगत में जयवन्त वर्तते हैं॥८॥

*मार=१. कामदेव, २. हिंसा, ३. मरण

श्लोक-८ पर प्रवचन

अब, पहली गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज श्री पद्मप्रभमल-धारिदेव श्लोक कहते हैं :- लो! अब मुनि स्वयं श्लोक कहते हैं। टीका स्वयं ने की है, उसका सार कहते हैं। आठवाँ श्लोक है, देखो! सात तो मंगलाचरण में आ गये हैं।

जयति जगति वीरः शुद्धभावास्तमारः,
त्रिभुवनजनपूज्यः पूर्णबोधैकराज्यः।
नतदिविजसमाजः प्रास्तजन्मद्रुबीजः,
समवसृतिनिवासः केवलश्रीनिवासः ।।८।।

इस ओर अर्थ है। भगवान वीरपरमात्मा कैसे थे? पद्मप्रभमलधारिदेव सन्त-मुनि वे स्वयं वर्णन करते हैं। **शुद्धभाव द्वारा मार का (काम का) जिन्होंने नाश किया है,...** देखो! पहले से शुरु किया है। ये पुण्य-पाप के शुभ-अशुभभाव तो अशुद्धभाव हैं। इनसे काम का, अज्ञान का, राग का नाश नहीं होता। आहा..हा..! काम-भोग कथा आता है न? राग स्वयं ही काम है। आहा..हा..! शुद्धभाव आत्मा पवित्र आनन्दस्वरूप की सन्मुखता का जो शुद्धभाव, ऐसे भाव द्वारा जिन्होंने काम का, मार का, मार अर्थात् काम, उसका नाश किया है। अतीन्द्रिय आनन्द का जिन्हें अनुभव है। समझ में आया?

कामवासना जगत को दुःखदायक है, ऐसा पहले बताते हैं। जगत को प्रिय लगता है। ऐसे शरीर, लक्ष्मी, बाह्य चीज़ें, वे सब विषय-वासना काम है। समझ में आया? अपने पदार्थ के अतिरिक्त दूसरा कोई भी पदार्थ जिसे उल्लसित वीर्य में उल्लास दे, वह सब काम है। उस काम का जिसने नाश किया है। आहा..हा..! दुनिया जिसे प्रीति के प्रेम से, जिसे भोग को आदरती है। इन्द्राणी और सुन्दर शरीर और खाने-पीने के सब मैसूरपाक, जामुन, दहीथरा और.... क्या कहलाता है वह? साटा और... यह बगल में बैठा हो और स्त्री हो, खाने का हो। वे कहते थे न? राजा को पाँच थी न? मास्टर कहते थे। हीराचन्द मास्टर नहीं? मास्टर नहीं कहते थे? एक ओर वेश्या नाचती हो, एक ओर बाग में बैठा हो, एक ओर खाता हो, एक ओर वाजिन्त्र बजते हों। ऐसा कुछ है। पाँचों इन्द्रिय के (विषय) एकसाथ (भोगे)। अरे! भगवान! तेरे बाग को छोड़कर इस राग के बाग में आया, यह

महाविषय की वासना है। पाँचों इन्द्रिय के विषय में प्रेम, यह सब वासना, कामवासना है। उसे जिसने शुद्धभाव द्वारा नाश किया है। देखो! दया, दान और व्रत के शुभभाव द्वारा नाश किया है, ऐसा नहीं है। क्योंकि वह स्वयं राग है। आहा..हा..! समझ में आया?

अरे! जिसकी मिठास आत्मा में आनन्द की है, उस मिठास को न जानकर राग की मिठास में पड़े हैं, वे काम-वासना के वश हो गये हैं, वे पामर हैं। आहा..हा..! प्रभु ने पामरता का प्रभुता द्वारा जिसने नाश किया है। समझ में आया? शुद्धभाव द्वारा पुण्य-पाप के भाव हैं, शुभ-अशुभ, दया-दान आदि, काम-क्रोध हैं, वे तो अशुद्धभाव हैं और अशुद्धभाव हैं, वह स्वयं ही काम है और दुःख है। ऐसी काम-भोग की कथा को अनन्त बार सुनी और की है। उसके नाश की कथा सुनी नहीं, ऐसा वहाँ (समयसार गाथा ४ में) कहा है। आहा..हा..!

सुदपरिचिदाणुभूदासव्वस्सवि कामभोगबंधकहा।
एयत्तस्सुवलंभो णवरि ण सुलहो विहत्तस्स॥४॥

परन्तु राग का वासना का शुभ और अशुभ विकल्प का है, उससे भिन्न भगवान एकत्व है और राग से भिन्न है। ऐसे स्वभाव की बात प्रीतिपूर्वक सुनी नहीं, परिचय किया नहीं, अनुभव किया नहीं। समझ में आया? इस बात की बात वहाँ से शुरु की, देखो! शुद्धभाव द्वारा जिसने... और यह पद्धति है, ऐसा जगत को कहते हैं जरा। राग और द्वेष वासना का नाश, आत्मा के शुद्ध चैतन्यस्वरूप का अनुभव (हुआ), उस शुद्धभाव द्वारा नाश होता है। समझ में आया? एक बात गुण की की। अब बाहर पुण्य की करते हैं।

तीन भुवन के जनों को जो पूज्य हैं,... यह बाहर की बात है, वह अन्तर की थी। तीन भुवन के जनों / लोगों को भगवान पूज्य है। तीन भुवन में सभी जीव एकेन्द्रिय आदि हैं। सब परन्तु महापुरुष हैं, लोग, उन्हें पूजते हैं और वे इन्हें पूजते हैं। भगवान को वे पूजते हैं। ऐसा कहकर तीन लोक के भुवन के पूज्य को पूजनेयोग्य है, ऐसा कहने में आता है। दूसरे कितने ही न मानें, इसलिए कहीं उनका पूज्यपना चला जाता है? ऐसा कहते हैं। तीन भुवन के लोक को पूज्य पूज्यपना है। आहा..! इतनी तो पुण्य की प्रकृति। वीर भगवान तीर्थंकरदेव शासन में केवलज्ञानरूप से विचरते थे। समवसरण में, हों! यह समवसरण में

विचरते की बात है। अभी तो मोक्ष पधारे, परन्तु भगवान नीचे विराजते थे, उस समय की बात याद करते हैं।

तीन भुवन के जनों को जो पूज्य हैं,... ऐसा कहकर तीन लोक भी सिद्ध किये और अनादि से काम-वासना थी, वह भी सिद्ध की न? हाँ, काम-वासना थी। अत्यन्त पवित्र दशा में अनादि से है, ऐसा है नहीं। अपना घर भूलकर परघर में भ्रमने की लगनी अनादि से थी। उसे जिसने आत्मा के अनुभव से, शुद्धभाव के मोक्षमार्ग से जिसका नाश किया।

पूर्ण ज्ञान जिनका एक राज्य है,... लो! साम्राज्य है, भगवान के पास साम्राज्य है। पूर्ण ज्ञान जिनका एक राज्य है। पूर्ण केवल। जिनके ज्ञान की दशा जलहल ज्योति पूर्ण जिन्हें प्रगट हो गयी है। वह उनका राज्य है, वह उनका राज्य है। यह धूल का राज्य वह उनका नहीं। अब दूसरा। यह गुण का वर्णन किया। अब बाहर का।

देवों का समाज जिन्हें नमन करता है,... पहले तीन भुवन को पूज्य है, ऐसा कहा। यह देवों का, देवों का समाज करोड़ों, अरबों के झुण्ड जिन्हें नमता है, ऐसे वीर भगवान जयवन्त वर्तो, ऐसा कहेंगे। देवों का समाज जिन्हें 'देवाधि नमनपंति' आता है न?... **जन्मवृक्ष का बीज जिन्होंने नष्ट किया है,...** गाथा का सार लिया न? जिन... जिन, जिन है न, वीतराग! जिन्होंने जन्मवृक्ष का बीज—चौरासी के अवतार में भटकने के बीज का जिन्होंने नाश किया है। जिन्होंने मोक्ष के बीज बो कर मोक्ष प्रगट किया है। केवलज्ञान वह मोक्ष, भावमोक्ष। **समवसरण में जिनका निवास है...** देखो! वापस बाहर से बात की। अन्दर की बाद में लेंगे। समवसरण धर्मसभा इन्द्रों ने रची होती है, उसमें जिन का-भगवान महावीर का निवास है। समझ में आया? किसी की वाडी में उतरे और फिर शिला पर बैठे, ऐसा नहीं, ऐसा कहते हैं। आता है न? श्वेताम्बर में ऐसा आता है। चम्पानगरी और अमुक वन में और अमुक नीचे पत्थर की शिला थी, वहाँ विराजते थे।

बारह प्रकार की बड़ी सभा। वह तो अलौकिक रचना! उसमें जिनका निवास है। यह व्यवहार कहा। अरिहन्त पद में थे, तब की बात का वर्णन करते हैं।

केवल, जिनमें केवललक्ष्मी वर्तती है। **और केवलश्री (केवलज्ञानदर्शनरूपी लक्ष्मी) जिनमें वास करती है,...** यह लक्ष्मी उन्हें है, उनके पास। आहा..हा..! कहो, यह

लक्ष्मीपति कहलाते हैं न? ये सब धूल के, वे तो जड़पति हैं। नवनीतभाई! लक्ष्मीपति कहते हैं न? धनपति, लक्ष्मीपति, नरपति, उद्योगपति और बड़े उद्योगपति अभी यह महिमा करे। उनके हाथ से बाहुबल से उद्योग बढ़ाकर उद्योगपति हुए। बड़ी पूँछ लगावे। पैसा लेना हो न... भाई! ऐसा अभी बाहर में चलता है या नहीं? आहा..हा..!

और केवलश्री (केवलज्ञानदर्शनरूपी लक्ष्मी) जिनमें वास करती है,... जिनमें अन्तर में तो स्वयं ज्ञान और दर्शन में बसते हैं अथवा ज्ञान-दर्शन उनमें बसते हैं। वे समवसरण में बसते नहीं - ऐसा कहते हैं। यह व्यवहार कहा। आहा..हा..! व्यवहार भी बतलाया और निश्चय भी बतलाया। **वे वीर जगत में जयवन्त वर्तते हैं।** वर्तते हैं, है न पाठ? ऐसा है न? पहला शब्द है न? '**जयति जगति वीरः**' इस जगत में वीर जयवन्त वर्तो। ऐसे परमात्मा! ओहो..! जिन्हें अरिहन्त परमेश्वर कहते हैं, उनकी ही पहिचान नहीं और णमो अरिहंताणं, णमो अरिहंताणं रटा करे, बोला करे। ऐसे अरिहन्त और देव हों, उन्हें मैं देवरूप से स्वीकार करके वन्दन करता हूँ, ऐसा कहते हैं। परमात्मा ऐसे होते हैं। तीर्थंकरदेव वीर प्रभु ऐसे होते हैं।

दूसरी गाथा। यह तो वन्दन और स्तुति की। अब नियमसार कहने की प्रतिज्ञा की थी, वह कहते हैं।

गाथा-२

मग्गो मग्गफलं ति य दुविहं जिणसासणे समक्खादं।
मग्गो मोक्खउवाओ तस्स फलं होइ णिव्वाणं।।२।।

मार्गो मार्गफलमिति च द्विविधं जिनशासने समाख्यातम्।
मार्गो मोक्षोपायः तस्य फलं भवति निर्वाणम्।।२।।

मोक्षमार्गतत्फलस्वरूपनिरूपणोपन्यासोऽयम्। 'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः' इति वचनात्, मार्गस्तावच्छुद्धरत्नत्रयं, मार्गफलमपुनर्भवपुरन्ध्रिकास्थूल-भालस्थललीला-लंकारतिलकता।

द्विविधं किलैवं परमवीतरागसर्वज्ञशासने चतुर्थज्ञानधारिभिः पूर्वसूरिभिः समाख्यातम्।

परमनिरपेक्षतया निजपरमात्मतत्त्वसम्यक्श्रद्धानपरिज्ञानानुष्ठानशुद्धरत्नत्रयात्मकमार्गो मोक्षोपायः, तस्य शुद्धरत्नत्रयस्य फलं स्वात्मोपलब्धिरिति।

है मार्ग का अरु मार्ग-फल का कथन जिन-शासन विषें।
है मार्ग मोक्षउपाय अरु निर्वाण उसका फल कहें॥२॥

अन्वयार्थ :—[मार्गः मार्गफलम्] मार्ग और मार्गफल [इति च द्विविधं] ऐसे दो प्रकार का [जिनशासने] जिनशासन में [समाख्यातम्] कथन किया गया है; [मार्गः मोक्षोपायः] मार्ग, मोक्षोपाय है और [तस्य फलं] उसका फल [निर्वाणं भवति] निर्वाण है।

टीका :— यह, मोक्षमार्ग और उसके फल के स्वरूपनिरूपण की सूचना (उन दोनों के स्वरूप के निरूपण की प्रस्तावना) है।

'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र, मोक्षमार्ग है)' — ऐसा (शास्त्र का) वचन होने से, मार्ग तो शुद्धरत्नत्रय है और मार्गफल,

मुक्तिरूपी रमणी के विशाल भालप्रदेश में शोभा-अलंकाररूप तिलकपना है (अर्थात्, मार्गफल, मुक्तिरूपी रमणी को वरण करना है)। इस प्रकार वास्तव में (मार्ग और मार्गफल, ऐसा) दो प्रकार का, चतुर्थ ज्ञानधारी (मनःपर्ययज्ञान के धारण करनेवाले) पूर्वाचार्यों ने परमवीतराग सर्वज्ञ के शासन में कथन किया है। निज परमात्मतत्त्व के सम्यक्श्रद्धान -ज्ञान-अनुष्ठानरूप शुद्धरत्नत्रयात्मक * मार्ग, परम निरपेक्ष होने से मोक्ष का उपाय है और उस शुद्धरत्नत्रय का फल, स्वात्मोपलब्धि (निज शुद्ध-आत्मा की प्राप्ति) है।

गाथा-२ पर प्रवचन

मग्गो मग्गफलं ति य दुविहं जिणसासणे समक्खादं।
मग्गो मोक्खउवाओ तस्स फलं होइ णिव्वाणं।।२।।

नीचे हरिगीत

है मार्ग का अरु मार्ग-फल का कथन जिन-शासन विषें।
है मार्ग मोक्षउपाय अरु निर्वाण उसका फल कहें॥२॥

अन्वयार्थ - 'मार्गः मार्गफलं' मार्ग और मार्गफल — ऐसे दो प्रकार का जिनशासन में कथन किया गया है;... वीतराग शासन में यह कथन है। ऐसा कथन अन्यत्र तीन काल में सर्वज्ञ के अतिरिक्त नहीं हो सकता। तीर्थंकरदेव वीतराग परमात्मा जिनेश्वर परमेश्वर के शासन में यह मार्ग कहा है। मार्ग और मार्ग का फल (कहा है)। लोगों को ऐसा लगता है कि यह तो पक्ष है, जैनधर्म यह पक्ष है। भाई! पक्ष नहीं, वस्तु का स्वरूप ही यह है। जिनवर शासन, वही धर्म का स्वरूप है। समझ में आया? **जिनशासन में कथन किया गया है;...** इसके अतिरिक्त अन्यत्र ऐसा मार्ग और मार्ग का उपाय, मार्ग उपाय और उसका फल ऐसा वर्णन, जिनेन्द्रदेव के मुख में से आया है, ऐसा वर्णन अन्यत्र है नहीं। समझ में आया?

---

* शुद्धरत्नत्रय, अर्थात् निज परमात्मतत्त्व की सम्यक्श्रद्धा, उसका सम्यक्ज्ञान और उसका सम्यक्-आचरण, पर की तथा भेदों की लेश भी अपेक्षा रहित होने से वह शुद्धरत्नत्रय, मोक्ष का उपाय है। उस शुद्धरत्नत्रय का फल, शुद्ध आत्मा की पूर्ण प्राप्ति, अर्थात् मोक्ष है।

मार्ग, मोक्षोपाय है... मार्ग कहो, उपाय कहो, कारण कहो। **और उसका फल, निर्वाण है।** मार्ग का फल निर्वाण है। देखो! कितनी स्पष्टता हुई है। मार्ग तो एक ही है, ऐसा सिद्ध करते हैं। मार्ग दो हैं, ऐसा है नहीं। देखो! नीचे कहेंगे।

यह, मोक्षमार्ग और उसके फल के स्वरूपनिरूपण की सूचना.... यह मोक्षमार्ग और उसके फल के स्वरूप का निरूपण, कथन की सूचना **(उन दोनों के स्वरूप के निरूपण की प्रस्तावना) है।** शुरुआत-प्रस्तावना-की है यह। अब देखो! निरूपण शब्द तो आया यहाँ। निरूपण सर्वत्र आता है न? निरूपण, निरूपण। व्यवहार निरूपण, निश्चय निरूपण - आता है न सर्वत्र? टोडरमलजी ने लिया है न!

'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः' देखो! यह उमास्वामी का सूत्र। कुन्दकुन्दाचार्य के शिष्य उमास्वामी हुए, जिन्होंने गागर में सागर भर दिया। सम्पूर्ण शासन का संक्षिप्त में सूत्र 'तत्त्वार्थसूत्र' बनाया। और पहला सूत्र यह है। **(सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र, मोक्षमार्ग है)'...** अभी देखो यह कोई कहते हैं कि यह मोक्षमार्ग जो वहाँ कहा है, वह व्यवहार है, ऐसा कोई कहता है। यह तो नाम करके उसे यहाँ निश्चय मोक्षमार्ग कहा है। वह व्यवहार मोक्षमार्ग है (ऐसा कहते हैं कि) तत्त्वार्थश्रद्धान व्यवहार मोक्षमार्ग है। **ऐसा (शास्त्र का) वचन होने से,...** यह पद्मप्रभमलधारिदेव, उमास्वामी का शास्त्र है, उसका यह वचन है, ऐसा कहना चाहते हैं।

मार्ग तो शुद्धरत्नत्रय है... लो! यह आया, इसका अर्थ ही यह है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र शुद्धरत्नत्रय की व्याख्या है, अशुद्ध की है ही नहीं। आहा..हा..! मोक्षमार्ग है तो वहाँ व्यवहार का मार्ग, वह तो बन्धमार्ग है। ए... पण्डितजी! ....करेंगे तुम्हारे पण्डित में तो बहुत। ....वे उदयपुरवाले क्या कहलाते हैं? चाँदमलजी। उदयपुर में चाँदमलजी थे न? यह उनसे पूछा कि यह सम्यग्दर्शन-ज्ञान (क्या है)? तो कहे यह तो व्यवहार है, व्यवहारमोक्षमार्ग है। पन्नालालजी ने तत्त्वार्थसूत्र का अर्थ किया है न, वे पन्नालाल इनके हैं वे। उन्होंने लिखा है कि व्यवहारमोक्षमार्ग है। यहाँ पुस्तक है। यह तुम्हारे पण्डित में यह चलता है। पुस्तक है न अपने यहाँ? मोक्षमार्गप्रकाशक (मोक्ष शास्त्र) उनका बनाया हुआ। लाओ न, उसमें लिखा है। ये पन्नालाल सागरवाले हैं न! यह तो व्यवहारमोक्षमार्ग की बात है।

यहाँ तो कहते हैं कि **मार्ग तो शुद्धरत्नत्रय है...** ये तीन जो शब्द कहे हैं, वे शुद्धरत्नत्रय के कहे हैं, ऐसा कहते हैं। इसका अर्थ किया। अरे रे! मूलवस्तु...

मुमुक्षु : ऐसे अर्थ किये हैं, इसीलिए हमें स्वीकार नहीं हैं, ऐसा कितने ही कहते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु अर्थ किये... सच्चे महामुनि हैं, पंच महाव्रतधारी हैं। तेरी दृष्टि प्रमाण कहे वे सच्चे और तेरी दृष्टि से विरुद्ध कहे वे झूठे। इस टीका को रतनचन्दजी नहीं मानते। ये रतनचन्दजी मुख्तार नहीं? आहा..हा..! अरे! भगवान! क्या करता है तू? कहाँ जाना है भाई तुझे? यहाँ तो कहते हैं कि जो सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्ग है, वह तो शुद्धरत्नत्रय की व्याख्या मैंने कही, ऐसा कहते हैं। देखो! यह कहते हैं। 'तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं' यह व्यवहार सम्यग्दर्शन का लक्षण है, वहाँ चिह्न किया है। पन्नालाल ऐसे के ऐसे लिखा करते हैं और लोग बिचारे भ्रम में पड़ते हैं।

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : क्या हो? चाहे जैसा करे। यह क्या कहते हैं?

'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः'—तत्त्वार्थसूत्र का (सूत्र है)। यह सम्यग्दर्शन, वह शुद्धरत्नत्रय शुद्ध है। मार्ग तो शुद्धरत्नत्रय एक ही बात ली है, दो बार नहीं लिया। भगवान आत्मा पूर्णानन्द प्रभु अतीन्द्रिय आनन्द का नाथ पूर्णानन्द प्रभु की अन्तर में सन्मुख की विकल्परहित निर्विकल्प वीतरागी प्रतीति / श्रद्धा, उसे शुद्धरत्नत्रय में उसका एक अवयव कहते हैं। सम्यग्दर्शन, उसे सम्यग्दर्शन कहते हैं। समझ में आया?

मार्ग तो शुद्धरत्नत्रय है.... ऐसा स्पष्ट जोरदार कहते हैं न! आहा..! बापू! मोक्ष का मार्ग तो शुद्धरत्नत्रय है। उसके सामने अशुद्धरत्नत्रय व्यवहार है, वह मार्ग नहीं है - ऐसा आया। अर्थ करने में भी विवाद। उसमें आता है न? 'जाति अन्ध का दोष नहीं आकरो।' जन्म का जाति अन्ध हो, वह तो कुछ देखता नहीं। भूराभाई गये? गये होंगे। 'जाति अन्ध का दोष नहीं आकरो, जो जाने नहीं अर्थ, मिथ्यादृष्टि देखी आकरो करे अर्थ के रे अनर्थ।' लड़के को कहा ऐ लड़के! दीपक सुलगा, तुमने कहा था न सुलगा (इसलिए) डाला अग्नि में। सुलगाने को कहा था न। सुलगाने का अर्थ क्या? हमारे यहाँ एक लड़की वहाँ थी वह बोलती थी। छोटी सात वर्ष की थी, पोपटभाई के लड़के की लड़की। सात वर्ष की थी। ऐसे श्लोक बहुत बोलती थी। बेचारी को सात वर्ष की उम्र में क्षय (टी.बी.) हो

गया, मर गयी। 'समझाया समझे नहीं करे कायनो कायीं, फासन सलगायो कह्युं, नाख्यू भड़का माही।' सुलटा अर्थ वकील को पूछो। रामजीभाई जैसों को, लो! शब्दार्थ करो। पण्डितजी को पूछो, ये संस्कृत के पण्डित हैं। ये ठीक हैं। फासन सलगाये कह्युं, ऐसा कहा है, लो! परन्तु सुलगाने का अर्थ उसमें बत्ती कर, दीपक कर। ऐसा लिया, सुलगाना अर्थात् जला डालना? ऐसे के ऐसे अर्थ समझे। समझ में आया? वह लड़की बोलती थी। बहुत वर्ष (पहले की बात है) संवत् १९८० के वर्ष की बात है। ४७ वर्ष हुए। वह बेचारी मर गयी। आहा..हा..! नटुभाई की लड़की थी। छोटी उम्र थी। उसके दादा ने ऐसे पच्चीस-पचास श्लोक सिखाये थे। बेचारी वह बोलती। क्षय (टी.बी.) होकर मर गयी। आहा..हा..!

अभी शास्त्र के वास्तविक अर्थ करने में विपरीतता। पण्डितजी! यह क्या कहते हैं? मोक्षमार्ग तो शुद्धरत्नत्रय एक ही है। व्यवहारमोक्षमार्ग, वह मार्ग नहीं; वह तो उपचार से निमित्त का कथन है। भाई ने लिखा है न? टोडरमलजी ने (लिखा है), मोक्षमार्ग दो नहीं, (मोक्षमार्ग का) निरूपण दो प्रकार से है, कथन दो प्रकार से है। निश्चय और व्यवहार कथन का प्रकार है, वस्तु दो नहीं। तुम्हारे अब यह कहते हैं या नहीं, मोक्षमार्ग दो माने तो भ्रम है, यह कहते हैं। समझ में आया? वह कहते हैं मोक्षमार्ग दो न माने वह भ्रम है। अब इसका क्या समझना? आहा..हा..! टोडरमलजी कहते हैं कि मोक्षमार्ग दो माने तो भ्रम है, क्योंकि यहाँ एक ही कहा है। वहाँ रतनचन्दजी कहते हैं दो नहीं माने, वे भ्रम में पड़े हैं। अब इसका क्या करना? लुटेरे।

बाड़ बेल को खाये। हमारे... दामोदर सेठ, वे बेचारे कहते थे। साधु था न? ....स्थानकवासी साधु थे। उनकी श्रद्धा वेदान्त की थी। इस लीमड़ी संघाड़ा के। बहुभाग लीमड़ी संघाड़ा के थे। हमने सबको देखा था। पालेज आये थे। पालेज हमारे बीच में सही न! मुम्बई से देश में आवे, तब हमारे यहाँ पालेज में आवे। सब आये थे, तब देखा था। उनकी श्रद्धा वेदान्त की हो गयी, जैन की रही नहीं। स्थानकवासी में थे। फिर यह हमारे सेठ थे, दामोदर सेठ थे, उनकी श्रद्धा मिथ्या परन्तु उनकी वेदान्त की नहीं, जैन सही। इसलिए सुधरे हुए लगते, गृहस्थ व्यक्ति इसलिए सुधरे हुए लगते। उनके साथ बात करते हुए वेदान्त की बात कह दी उन ने। वह मानो कि यह मेरी बात स्वीकार करेंगे। बेचारे बोले, अरे! महाराज! बाड़ बेल को खाये, हमें कहाँ जाना? ऐसा बोले थे। हमारा वेश पहनकर इस वेदान्त को माने, हमें कहाँ जाना? इसी प्रकार यहाँ वीतरागमार्ग का सहारा छोड़कर

अपनी कल्पना के मार्ग से मार्ग कहे, उसे कहाँ जाना ? जैतपुर में कहा था।

(यहाँ) कहते हैं, मार्ग तो शुद्धरत्नत्रय एक ही है, ऐसा हुआ या नहीं ? **और मार्गफल, मुक्तिरूपी रमणी...** अपने पूर्ण आनन्द की परिणमन दशा, पूर्ण अतीन्द्रिय आनन्द, पूर्ण अतीन्द्रिय आनन्द, अनन्त-अनन्त आनन्द, ऐसी मुक्तिरूपी परिणति / रमणी, उसका **विशाल भालप्रदेश...** कपाल विशाल है। **शोभा-अलंकाररूप तिलकपना है...** लो ! उसमें तिलक होता है न ! इसी प्रकार मुक्तिरूपी लक्ष्मी तिलकरूप है। आहा..हा.. ! **(अर्थात्, मार्गफल, मुक्तिरूपी रमणी को वरण करना है)।** ऐसा जो मार्ग, भगवान आत्मा परिपूर्ण शुद्ध है, उसकी श्रद्धा, ज्ञान और रमणता करे, वह एक ही मार्ग है और उसके फलरूप ऐसी मुक्ति है। व्यवहाररूप का फल मुक्ति और व्यवहारमोक्षमार्ग, यह दो है नहीं। पण्डितजी ! इसमें कहा या नहीं ऐसा ? टोडरमलजी ने क्या भाषा कही है ? शास्त्र में आया, दो मोक्षमार्ग नहीं। सब ऐसे के ऐसे। यह बात दामोदर सेठ कहते थे। क्या टोडरमलजी केवली हो गये ? सबको खटकता था। (संवत्) १९८३ के वर्ष में बहुत चर्चा चलती थी। १९८३, हों ! कितने वर्ष हुए ? ४४ हुए। बहुत चर्चा चलती थी। यह टोडरमलजी ऐसा कहते हैं। (तो वह सेठ कहे), वह केवली हो गया ?... परन्तु वस्तु का स्वरूप जो परम्परा से है, वह कहते हैं। ऐसा न हो तो दूसरे प्रकार से हो ही नहीं सकता न ! बड़ी चर्चा चले, यह तो चर्चाएँ तो हमारे शुरु से (संवत्) १९७१ से चलती है, ५६ वर्ष हुए। आहा..हा.. !

कहते हैं, मार्ग का फल, आहा..हा.. ! मार्ग का छोर पूर्ण आवे, वह मुक्ति। मुक्तिरूपी लक्ष्मी वरता है। तिलकपना है न ? ऐसे तिलकपना करे अर्थात् वरण किया। मुक्तिरूपी रमणी को वरता है। **इस प्रकार वास्तव में (मार्ग और मार्गफल, ऐसा) दो प्रकार का,...**

मुमुक्षु : निश्चय व्यवहार नहीं लिया, यह दो प्रकार ऐसा लिया।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह दो प्रकार है न, यही है न दो प्रकार, ऐसा कहते हैं। उपाय और फल दो है। उपाय दो प्रकार के हैं, यह कहाँ से आया ? आहा.. ! क्या हो ? जगत को पण्डित जब लूटे, तब उसे कहाँ जाना ?

यह दो प्रकार का प्ररूपण वीतरागमार्ग में **चतुर्थ ज्ञानधारी...** चार ज्ञान के धारक गणधर **(मनःपर्ययज्ञान के धारण करनेवाले) पूर्वाचार्यों ने परमवीतराग सर्वज्ञ के शासन में कथन किया है।** चार ज्ञान के धारकों ने-पूर्वाचार्यों ने, अनन्त आचार्यों ने परम

वीतराग सर्वज्ञ के शासन में, वापस ऐसा (लिखा है)। परमवीतराग सर्वज्ञ के शासन में यह कथन किया है। मार्ग और मार्गफल दो प्रकार है। मार्ग शुद्धरत्नत्रय, यह कथन पूर्वोचार्यों ने परमवीतराग सर्वज्ञ शासन में यह कथन किया है, कहते हैं। व्यवहार, वह मोक्षमार्ग का कथन आचार्य का कहा नहीं। कथन है, वह निमित्त का ज्ञान कराने को (कहा है)। गजब बात, भाई! आहा..!

पूर्वाचार्य कितने? जितने आचार्य हुए वे। परमवीतराग सर्वज्ञ के शासन में परमेश्वर वीतरागदेव जिनेन्द्रदेव के शासन में कथन किया है। यह सब गणधरों ने ऐसा कथन किया है, कहो, समझ में आया? भगवान की वाणी तो अमुक समय निकलती है न, रचना तो गणधर करते हैं। इसलिए सूत्र में ऐसे आचार्यों ने ऐसा कहा है, ऐसा कहा है। गणधरों ने इस प्रकार कहा है, क्योंकि सूत्र की रचना तो वे आचार्य करते हैं। आहा..हा..!

परमवीतराग सर्वज्ञ के शासन में कथन किया है। अनन्त आचार्यों और गणधरों ने शास्त्र में ऐसा कहा है, ऐसा कहते हैं। निश्चय आत्मा के स्वभाव का भान, अनुभव, वह सम्यग्दर्शन-ज्ञान और चारित्र है, वही मोक्ष का मार्ग है। आहा..हा..! देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा का राग, वह मोक्ष का मार्ग नहीं है, ऐसा कहते हैं। छूटने का मार्ग नहीं है, ऐसा कहते हैं। आहा..हा..! यह वीतराग कहे। मुख के सामने निवाला किसे... बापू! ऐसा नहीं, हों! तेरा स्वभाव प्रभु! मेरे जितना ही परिपूर्ण है। उसका अन्तरज्ञान करके, उसका ज्ञान करके और तुझसे तेरी श्रद्धा तू कर। उसे हम सम्यग्दर्शन-ज्ञान कहते हैं। समझ में आया? वीतरागमार्ग लोगों को सुनने को मिला नहीं। विपरीत मार्ग में जाये और माने कि हम (धर्म करते हैं)। जिन्दगी जाती है, चली जाती है।

अब इसका स्पष्टीकरण करते हैं। **पूर्वाचार्यों ने परमवीतराग सर्वज्ञ के शासन में...** सबको डाला, देखो! अनन्त गणधरों ने और परमवीतराग सर्वज्ञ का शासन, उसमें यह बात है। देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा, वह मोक्ष का मार्ग, ऐसा अनन्त सर्वज्ञों ने और गणधरों ने नहीं कहा। है इसमें? आहा..हा..! अब यह क्या मार्ग है? जो चार ज्ञान के धनी ने वीतरागशासन में कहा है, वह क्या?

निज परमात्मतत्त्व के सम्यक्श्रद्धान... भाषा तो देखो! अरिहन्त परमात्मा की श्रद्धा भी नहीं। शशीभाई! आहा..हा..! निजपरमात्मतत्त्व, अपना परमस्वरूप शुद्ध ध्रुव

अचिन्त्य, अचल अविनाशी, ऐसा भगवान आत्मा, ऐसा परमतत्त्व स्वभाव का सम्यक्श्रद्धान, उसकी सच्ची श्रद्धा, वह शुद्ध रत्नत्रय में से एक सम्यग्दर्शन है। समझ में आया ? '....'! देखो! क्या है, देखो। आहा..हा..! भगवान तू परिपूर्ण प्रभु है, हों! देखो न, परमात्मा लिया न ? निज परमात्मा स्वयं परमस्वरूप। ज्ञान, आनन्द, शान्ति, स्वच्छता, प्रभुता (आदि) अनन्त शक्तियों का परमस्वरूप स्वयं आत्मा। ऐसा निज आत्मा, निज परमात्मा की सम्यक् श्रद्धा, उसे सम्यग्दर्शन और मोक्ष का मार्ग कहते हैं। समझ में आया ?

निज परमात्मतत्त्व का ज्ञान, उसके साथ लेना। निज परमात्मतत्त्व का सम्यक्श्रद्धान, उसके साथ निज परमात्मतत्त्व का सम्यग्ज्ञान - ऐसा लेना। निज आत्मा का ज्ञान, उसे ज्ञान कहते हैं। देव-गुरु-शास्त्र का ज्ञान, वह ज्ञान नहीं। आहा..हा..! गजब काम है। समझ में आया ? देव-गुरु-शास्त्र को जाना-पहिचाना, वह ज्ञान नहीं, कहते हैं। वह तो परलक्ष्यी है, वह तो बन्ध का कारण है। भारी गजब बात! वीतराग का मार्ग! आहा..हा..! निज परमात्मतत्त्व का सम्यग्ज्ञान। अपना निज स्वरूप भगवान, पूर्ण ब्रह्मानन्द निज प्रभु आत्मा का ज्ञान, उस ज्ञान को ज्ञान कहते हैं। समझ में आया ? वह ज्ञान मोक्ष का मार्ग है। अपने आत्मा का स्वरूप, उसका ज्ञान, वह मोक्ष का मार्ग है। शास्त्र का ज्ञान, परलक्ष्यी सब पठन, वह कहीं ज्ञान नहीं, वह कहीं मोक्षमार्ग नहीं। आहा..हा..! कहो, समझ में आया ?

निज परम आत्मा, परमस्वरूप भगवान ऐसा ज्ञायकभाव त्रिकाल, ऐसा अनन्त गुण का एकरूप स्वभाव, उसकी अन्तर में रुचि-दृष्टि का परिणमन (होवे), उसे श्रद्धा कहते हैं, उसकी रुचिसहित का अन्तर का ज्ञान (होवे), उसे ज्ञान कहते हैं और निज परमात्मतत्त्व के सम्यक् अनुष्ठान उसके साथ लेना। निज परमात्मा, आनन्द और ज्ञानस्वरूप प्रभु आत्मा का अनुष्ठान-सम्यक् अनुष्ठान, वापस प्रत्येक को। सम्यक् अनुष्ठान अन्तर में आचरण में आनन्द में स्थिर होना, उसका नाम चारित्र है। यह वस्त्र बदले और नग्न हो गये, वह चारित्र नहीं; पंच महाव्रत के विकल्प हों, वह भी चारित्र नहीं। आहा..हा..! समझ में आया ? यह है न, लीलाधरभाई! इसमें लिखा है या नहीं ? ऐ... राजूभाई! आहा..हा..!

भाई! तेरे घर की चीज़ तो यह है, इसे पहले समझ में तो लेना पड़ेगा। इसके बिना जरा भी आगे नहीं चलेगा। आहा..हा..! श्रद्धा में ऐसे ले कि मुझसे ही मेरी श्रद्धा (होगी) और मुझसे ही मेरा ज्ञान (होगा), ऐसी श्रद्धा नहीं करे तो स्वसम्मुख नहीं झुक सकेगा।

क्योंकि वस्तु का स्वभाव वह माने वैसा विपरीत नहीं है। समझ में आया?

निज परमात्मतत्त्व के सम्यक्श्रद्धान, सम्यग्ज्ञान, निज परमात्मतत्त्व का सम्यग्ज्ञान, निज परमात्मतत्त्व का सम्यक् अनुष्ठान। लो! यह अनुष्ठान, अनुष्ठान आचरण कहते हैं, वह कुछ नहीं। आहा..हा..! तीक्ष्ण धार जैसा लगे यह तो। आहा..हा..! कैसे पहुँचा जाये? स्वरूपचन्दभाई! है तो इसका स्वरूप, परन्तु इसे ऐसा हो गया है कि... ऐसे **निज परमात्मतत्त्व के...** परन्तु क्या स्पष्टीकरण किया है! टीका इतनी स्पष्ट की है कि व्यवहारवालों को यह रुचती नहीं है।

मुमुक्षु : इसीलिए तो नहीं मानते।

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं मानते। अभी तो कहेंगे, देखो न!

शुद्धरत्नत्रयात्मक मार्ग, परम निरपेक्ष होने से... आहा..हा..! व्यवहार से निश्चय होता है, ऐसा वस्तु के स्वरूप में नहीं है। व्यवहार शुभोपयोग है, राग है, विभाव है। उससे शुद्ध उपयोग और आत्मस्वभाव होवे, ऐसा वस्तु का स्वरूप नहीं है। आहा..हा..! कषाय की मन्दता करो, भक्ति करो, दया, दान, व्रत, पूजा (करो), उससे व्यवहार से बाद में निश्चय समझ में आयेगा। कहते हैं कि यह वस्तु का स्वरूप ही ऐसा नहीं है। आहा..हा..!

शुद्धरत्नत्रयात्मक मार्ग—ये तीन शुद्ध कहे न? तीनों ही। शुद्धरत्नत्रयस्वरूप मार्ग परम निरपेक्ष होने से। अकेला निरपेक्ष नहीं। उसे व्यवहार के विकल्प की अपेक्षा नहीं है। जिसे देव-गुरु की, शास्त्र की श्रद्धा हो तो समकित हो, ऐसी अपेक्षा नहीं है। सुना नहीं होगा कभी ऐसा। पूरे दिन टोकरी बजाया करे और सामने श्रीमद् का फोटो रखे। जय भगवान! अपना कल्याण हो जायेगा।

मुमुक्षु : परन्तु गुरु ही कल्याण कर देते हैं न?

पूज्य गुरुदेवश्री : किया। गुरु स्वयं है। गुरु कहाँ...? कहो, समझ में आया इसमें? ऐसा मार्ग है। प्रकाशदासजी! भगवान दे देंगे, गुरु दे देंगे। वहाँ कहाँ उनके पास तू था कि वे दें। तू तो तेरे पास है।

शुद्धरत्नत्रयमार्ग परम निरपेक्ष, ऐसा कहकर व्यवहार की अपेक्षा उसे नहीं है, ऐसा सिद्ध करते हैं। आहा..हा..! विकल्प की अपेक्षा, राग की अपेक्षा, निमित्त की अपेक्षा

(नहीं है) । व्यवहार कहो या निमित्त कहो । शुद्धस्वभाव की श्रद्धा, ज्ञान, चारित्र की दशा में राग की, निमित्त की अपेक्षारहित वह तत्त्व है । आहा..हा.. ! परन्तु जहाँ कहीं-कहीं व्यवहार को कारण और साधन और ऐसा कहे न... ऐ... भीखाभाई ! वे तो व्यवहार के कथन हैं । उस भूमिका में ऐसा होता है, उसका निमित्त का ज्ञान कराने के लिये (कहा है) । होता है, परन्तु उससे होता है, ऐसा नहीं है । आहा..हा.. ! गजब बातें, भाई ! समझ में आया ?

अकेला निरपेक्ष (शब्द) प्रयोग नहीं किया, परम निरपेक्ष (कहा है) । कथनी भी पद्मप्रभमलधारिदेव की ! जंगलवासी वीतरागी सिंह थे । आहा..हा.. ! राग पर तो हिरण को जैसे सिंह फाड़े, वैसे फाड़कर तोड़कर वीतरागता प्रगट की है । मार-फाड़ वीतरागता अन्दर जलहलती है । इस वीतरागभाव की श्रद्धा, ज्ञान में हमें देव-गुरु की, शास्त्र की श्रद्धा के विकल्प की भी आवश्यकता नहीं है । नवनीतभाई ! निरपेक्ष । आहा..हा.. ! श्रद्धा में तो ले, पहले ज्ञान में तो ले । आहा..हा.. ! ऐसा निरालम्बी-पर के अवलम्बनरहित भगवान आत्मा अतीन्द्रिय आनन्द का पूर्ण धाम है । उसकी श्रद्धा, ज्ञान और स्थिरता में पर की कुछ जरा भी, जरा भी अपेक्षा नहीं है - ऐसा निरपेक्ष रत्नत्रय मार्ग, वह मोक्ष का उपाय है । वीतराग के वचन कठोर, कायर को प्रतिकूल, श्रीमद् में आता है न ?

वचनामृत वीतराग के, परम शान्तरस मूल,
औषध जो भवरोग के, पर कायर को प्रतिकूल ।

नपुंसक जैसे, वीर्यहीन । अरे ! ऐसा मार्ग होगा ? ऐसा मार्ग होगा ? अरे ! सुन न ! वीर का मार्ग तो ऐसा होता है । अफरगामी का मार्ग ऐसा होता है । जिस मार्ग में चढ़े, वहाँ से वापस नहीं फिरते, ऐसा मार्ग होता है । पर की अपेक्षा रखे बिना का मार्ग होता है । आहा..हा.. ! समझ में आया ?

परम निरपेक्ष होने से मोक्ष का उपाय है... पर की अपेक्षारहित है, इसलिए शुद्धरत्नत्रय मोक्ष का उपाय है । आहा..हा.. ! **और उस शुद्धरत्नत्रय का फल,...** पहला मार्ग कहा । **स्वात्मोपलब्धि (निज शुद्ध-आत्मा की प्राप्ति) है ।** बस, आत्मा की प्राप्ति का अर्थ (यह कि) आत्मा जैसा है, ऐसी पूर्ण दशा में प्राप्ति, उसका नाम रत्नत्रय का फल है ।

विशेष कहेंगे.... (**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव !)